पीछे बँधे हैं हाथ मगर शर्त है सफर..!

मध्यप्रदेश सरकार की स्थिति आज वैसे ही है जैसे कोई नटी आसमान में तने रस्से पर बाँस लेकर संतुलन साधे चीटी की गति से आगे बढ़ रही हो। प्रदेश की जनता मेले के तमाशबीनों की भाँति अवाक और हतप्रभ है। 21 मार्च को भाजपा की 'लाए-जोरे' की सरकार बनने के बाद पंच परमेश्वरों को मंत्री बनाने में पखवाड़े भर लग गए। फिर अगले विस्तार के लिए राज्यसभा चुनाव का उबाऊ इंतजार। 20 जून को चुनाव के बाद मंत्रिमंडल के पूर्ण विस्तार में 12 दिन लगे वह भी दिल्ली के बारह फेरे के बाद और अब विभागों के बँटवारे में वैसे ही स्थिति है जैसे रोटी के एक टुकड़े को बंदर-बिल्ली-कुत्ते और कौव्वे के बीच बाँटना।

विस्तार के बाद से हल्ला है कि मंत्रिपरिषद में 'लायन शेयर' ज्योतिरादित्य सिंधिया ले गए और विभागों के बँटवारे में उनकी नजर अपने समर्थकों को मलाईदार विभाग दिलाने में है। अब सत्ता सेवा रह भी कहां गई..! वह तो मालपुआ है और कोरोना के संकट काल में यह पौष्टिकता कौन नहीं चाहेगा। सिंधियाजी ने शिवराज जी के 'टाइगर अभी जिंदा है' के चर्चित डायलॉग को भी हड़पने की कोशिश की है। जंगल की व्यवस्था में टाईगर की अपनी टेरेटरी होती है। वह दूसरे के बर्दाश्त नहीं करता। इस डायलॉग के निहतार्थ को अच्छे से समझ लेना चाहिए, वजह मध्यप्रदेश के सियासी जंगल की एक ही टेरेटरी में दो टाईगर आ चुके हैं।

हम लोकतंत्र की नैतिकता और मर्यादा का भले ही कितना ढोल पीटें उसकी पोल में सभी धतकरम चलते रहते हैं। यह कोई आज से नहीं.. जमाने से चलता चला आ रहा है। हमने हरियाणा में भजनलाल-वंशीलाल-देवीलाल-रामलाल का दौर भी देखा है। रात किसी दल में सोते, सुबह होते ही किसी दूसरे दल की दालान में कुल्ला मुखारी कर रहे होते।
अब इसी बार हरियाणा में यदि देवीलाल के पंती ने भाजपा सरकार को समर्थन नहीं दिया होता तो..बलात्कार और धोखाधड़ी के नामाजादिक आरोपी गोपाल कांड़ा के लिए दरवाजा खुला था। मध्यप्रदेश में लोकतंत्र का गला चपाने की बात करने वाली कांग्रेस का तो ट्रैक रिकॉर्ड ही दूसरे दलों की सरकार की अकाल हत्या का रहा है..सो हम लोक-फोकतंत्र की बात करने की बजाय बात करेंगे कि मध्यप्रदेश में क्या हो रहा है और आगे का अनुमान क्या है।

जो लोग सरकार को लेकर सिंधिया जी के अपरहैंड और उनकी मनमर्जी की बात कर रहे हैं उनको यह अच्छे से समझ लेना चाहिए कि कांग्रेस सरकार को गिराने को लेकर उनका भाजपा के साथ यही 'एमओयू' हुआ था। जो कांग्रेस का मंत्रिपरिषद त्याग कर आए थे उन्हें तो मंत्री बनना ही था और उनको भी मंत्री बनाना था जो इसी की लालसा के चलते कांग्रेस छोड़ी। सो इसलिए यह अनहोनी नहीं कि कांग्रेस से आए लोगों को थोक के भाव मंत्री बना दिया गया।

मुझे यह भी मिथ्या लगता है कि मलाईदार विभागों को लेकर सिंधिया जी का कोई पेंच है..। यदि पेंच है तो भाजपा के भीतर ही है और वह अबतक एक छत्र रहे शिवराज सिंह चौहान को कसने के लिए। इसे

इसी बात से समझा जा सकता है कि पहली किश्त में जब पाँच मंत्री बनाए गए तब एक भी उनकी पसंद के नहीं थे। पूर्ण विस्तार में सिर्फ़ सागर के भूपेन्द्र सिंह को उनके खाते का माना गया।
भूपेन्द्र सिंह भले ही शिवराज जी के खाते के माने गए हों लेकिन उन्हें मंत्री बनने देने का ज्यादा योगदान गोविंद सिंह राजपूत को है जिन्हें सुर्खी से उपचुनाव लड़ना है। राजपूत के कहने पर सिंधिया जी ने भूपेन्द्र की पैरोकारी की ताकि उनके पट्ठे राजपूत का पथ प्रशस्त हो सके। राजपूत और भूपेन्द्र राजनीति में दुश्मनों की हद तक प्रतिद्वंद्वी रहे हैं। भूपेन्द्र फुरसत में बैठते तो राजपूत का बंटाधार करते ऐसा मान लिया गया था। सो शिवराज जी अपने ही मंत्रिपरिषद में सदा सर्वथा अकेले हैं..और ताज़ भोपाली का यह शेर कि-

पीछे बँधे हैं हाथ मगर शर्त है सफर
किससे कहें कि पाँव के काँटे निकाल दे।

मंत्रिपरिषद के गठन के दिनों मैं भी भोपाल में फँसा था, करोना की वजह से। 1 जुलाई की रात की बेसब्री देखी..यह लगभग वैसे ही थी जैसे कि दूसरे दिन लाटरी का बम्पर ड्रा निकलने वाला हो। 2 जुलाई को शपथ के बाद मेरे एक पत्रकार मित्र की जुबानी टिप्पणी थी कि 'यह लचर नेतृत्व(संगठन), लाचार मुख्यमंत्री वाली मजबूर सरकार है। ऐसे-ऐसे मंत्रियों के चेहरे और घर बैठने को कह दिए गए कद्दावरों को देखकर साफ कहा जा सकता है कि मध्यप्रदेश के इतिहास में पहली बार बौनों ने आदमकदों की सीआर(गोपनीय चरित्रावली) लिखी है।

भाजपा कार्यालय के बाहर एक बागी तेवर वाले पके हुए नेता की एक लाइन की टिप्पणी थी 'आधी छोड़ सारी को धावै, आधी मिलै न सारी पावै'।

इस टिप्पणी की व्याख्या आप उमा भारती के वक्तव्य से समझ सकते हैं- इस सौदेबाज़ी से बेहतर होता कि मध्यावधि चुनाव कराकर नया जनादेश लेकर आते। पस्त कांग्रेस किसी भी कीमत पर दुबारा न जीतती। उमा भारती की तरह कई वरिष्ठ नेताओं को अंदेशा है कि यह मंत्रिमंडल और सरकार दशकों की मेहनत से अर्जित किए गए भाजपा के जनाधार को खो देगी..क्योंकि क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व, परफॉर्मेंस और जनाधार वाले नेताओं की गंभीर उपेक्षा की गई है। उपचुनाव को साधने के लिए चंबल-ग्वालियर के कंधे पर एक जुआँ रख दिया गया है..और दूसरा खाली। सत्ता की बैलगाड़ी कभी भी चरमराकर ध्वस्त हो सकती है।

मंत्रिपरिषद में प्रतिनिधित्व को लेकर मालवा, महाकोशल से लेकर विंध्य तक में उबाल है। लावा जब तक बाहर नहीं आता पता ही नहीं चलता कि जमीन के भीतर ज्वालामुखी धधक रहा है। महाकोशल के दिग्गज भाजपा नेता अजय विश्नोई की यह टिप्पणी गौर करने लायक है कि संगठन और सरकार अपने विधायक और कार्यकर्ताओं को साध सकती है जनता को नहीं।

सबसे ज्यादा उपेक्षा विन्ध्य व महाकोशल की हुई है। निवृत्तमान मुख्यमंत्री कमलनाथ महाकोशल से थे। कांग्रेस की सरकार में इस क्षेत्र का अच्छा खासा रसूख था। भाजपा ने इसे एक झटके में शून्य कर दिया। महाकोशल जन्मजात भाजपाई नहीं है। जबलपुर भले ही आरएसएस की शक्तिपीठ रहा होता लेकिन भाजपा को खाता खोलने में 1990 तक इंतजार करना पड़ा। महाकोशल की तासीर भी विंध्य की तरह

कांग्रेसी और समाजवादी रही है। कार्यकर्ताओं ने बड़ी मेहनत से इसे भाजपा का अभेद्य गढ बनाया। महाकोशल के लोग आज भी यह नहीं भूले हैं कि 1956 में गठित मध्यप्रदेश की राजधानी जबलपुर को न बनाकर उसके साथ कैसा छल किया गया। आज प्रदेश के इस महानगर व जिले का प्रतिनिधित्व मंत्रिपरिषद में शून्य है। कार्यकर्ता से ज्यादा यहां की जनता उपेक्षित और असम्मानित महसूस कर रही है।

विंध्य की बात तो और भी विकट है। आज प्रदेश में भाजपा की जो सरकार है उसकी इमारत विंध्य के बुनियाद पर टिकी है। विंध्य जिसे हम अब बघेलखण्ड तक ही सीमित मानकर चलते हैं, में 2018 के चुनाव में 30 में से 24 सीटें मिलीं। रीवा-शहड़ोल-सिंगरौली में तो कांग्रेस का खाता ही नहीं खुल सका..वह प्रतिनिधित्व शून्य है। उमरिया और सतना जिले से जिन मीना सिंह और रामखेलावन पटेल को मंत्री बनाया गया उन्हें पड़ोस के जिले के लोग भी अच्छी तरह से नहीं जानते। आजादी के बाद से 2018 तक इस क्षेत्र के प्रतिनिधित्व की ऐसी भीषण अवहेलना कभी नहीं हुई। विंध्य कभी विंध्यप्रदेश रहा है। इसकी अपनी अलग राजनीतिक पहचान भोपाल से दिल्ली तक रही। श्रेष्ठ नेताओं की एक भव्य परंपरा रही। पंडित शंभूनाथ शुक्ल, गोविंदनारायण सिंह यमुना शास्त्री, अर्जुन सिंह, श्रीनिवास तिवारी, बैरिस्टर गुलशेर अहमद, कृष्णपाल सिंह, चंद्रप्रताप तिवारी, शत्रुघ्न सिंह तिवारी, रामकिशोर शुक्ल, मुनिप्रसाद शुक्ल, रामानंद सिंह, जगन्नाथ सिंह, राजेंद्र कुमार सिंह, अजय सिंह राहुल से लेकर राजेंद्र शुक्ल तक व कई अन्य नेता भी। इन नेताओं ने अपनी राजनीतिक मेधा से भोपाल और दिल्ली तक विंध्य के प्रतिनिधित्व की धाक जमाई..। इसके बरक्स जब आज की स्थिति देखते हैं तो यहां के नेतृत्व को अपाहिज बना देने की साजिश साफ नजर आती है।

यह कैसी विडंबना है..10 जुलाई को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी रीवा जिले के गुढ़ बदवार में बने दुनिया के विशालतम समझे जाने वाले सोलर पार्क को लोकार्पित करेंगे और इस सोलरपार्क के योजनाकार राजेन्द्र शुक्ल महज एक विधायक की हैसियत में रहेंगे। यह तो आयोजकों का बडप्पन है कि उनको लोकार्पण समारोह में जगह दी वरना वो तो महज रीवा विधानसभा के सदस्य मात्र हैं..और यह सोलरपार्क गुढ़ विधानसभा में है। ऊर्जा के क्षेत्र में बतौर मंत्री राजेन्द्र शुक्ल ने जो काम किया उसकी सराहना खुले मंच से नरेन्द्र मोदी स्वयं कई बार कर चुके हैं। राजेन्द्र शुक्ल ने विंध्य के विकास को मूलधारा में शामिल करते हुए यहां की राजनीतिक राजधानी रीवा को इंदौर के मुकाबले खड़ा करने की कोशिश की। मंत्रिपरिषद में सत्ता की सौदेबाजी के चलते प्रदेश के एक होनहार नेता की मेधा, क्षमता की बलि दे दी गई। जनता के बीच सही संदेश नहीं गया।

विंध्य कभी जनसंघ और भाजपा का नहीं रहा।1990 के बाद यहां के कार्यकर्ताओं ने अपने खून पसीने से सींचकर इसे भाजपा का बाग बनाया। जनता में उम्मीदें जगीं और तब से लेकर अब तक हर चुनाव में अन्य क्षेत्रों के मुकाबले आगे बढ़कर भाजपा का साथ दिया। लेकिन मिला क्या...! सबके सामने है..। भाजपा के उस बुजुर्गवार का कहना सही ही है-"आधी छोड़ सारी को धावै आधी मिलै न सारी पावै"। कांग्रेस भाजपा के इसी विरोधाभास से मुदित है। उपचुनाव के उसके सर्वे में जीत ही जीत नजर आ रही है। गद्दारों को हराओ के हुंकार के साथ उसका रथ चंबल-ग्वालियर में उतर चुका है। भाजपा की राह आसान नहीं... उसके पास 'मोदी' नाम के करिश्मे के सिवाय कुछ शेष नहीं बचा है। लोकसभा चुनाव में सिंधिया अपने ही एक सिपहसलार से हार चुके हैं। उन्हें हराने वाले केपी सिंह भाजपा में ही हैं।

विधानसभा में जो-जो भी कांग्रेस से हारे हैं बदले समीकरण में वे उनकी जीत के लिए जाजम नहीं बिछाएंगे...काँटे ही बोएंगे। उनके भविष्य का सवाल है। दलबदलुओं का एक बार सिक्का जमा तो अपनी जवानी होम करने वाले वो भाजपाई पल भर में खरे से खोटे हो जाएंगे। वे और उनके समर्थक ऐसा कैसे होने देंगे। जनता के बीच में ऐसे असहाय भाजपाइयों के प्रति सहानुभूति और ऊपर से कांग्रेस का 'गद्दारों को हराओं' वाला आक्रामक नारा इस उपचुनाव को सहज नहीं रहने देगा। कांग्रेस इन उप चुनावों में तन-मन-धन सभी झोंक देगी।

भविष्य की एक और कल्पित तस्वीर सामने है, ज्योतिरादित्य सिंधिया को लेकर। भाजपा यदि इन उप चुनावों में जीत जाती है तो सिंधिया का कद "लार्जर दैन लाइफ" हो जाएगा। उनके गुट के मंत्रियों के लिए अभी भी भाजपा नहीं महाराज ही अभीष्ट हैं..। कल सरकार बनी रही तो सत्ता के दो स्वाभाविक केंद्र बन जाएंगे.. वैसे अभी भी कमोबेश स्थिति ऐसे ही है। यदि उप चुनावों में भाजपा सफल नहीं रहती तो तय है कि वह भविष्यवाणी चरितार्थ होगी कि- छब्बीस जनवरी को कमलनाथ ही झंडा फहराएंगे।

भाजपा अपने ही बुने जाल में उलझ चुकी है। बौने कद के योजनाकारों ने आदमकदों को घर बैठाकर घरफूँक तमाशा देखने की तैय्यारी कर ली है..। क्योंकि दोनों ही स्थितियों का असर भविष्य निर्धारित करेगा। मध्यप्रदेश भाजपा का अजेय किला समझा जाता था..। कभी कभार के चुनावों में बुर्ज के कंगूरे..या झाड़फनूस भले ही हिले हों पर किला अबतक सलामत ही बचा रहा। यह आगे भी सलामत बचा रहेगा..फिलहाल ऐसी किसी सूरत पर आसन्न सत्ता लोभ ने कीचड़ के धब्बे लगा दिए हैं। एक अकेले शिवराज के बूते इसे साफ करना आसान नहीं और वह तब, जब- पीछे बँधे हैं हाथ मगर शर्त है सफर।

साभार- https://www.nayaindia.com/ से